भारत का एक सुप्रसिद्ध हिन्दी कृषि समाचार-पत्र (न्यूज़ पेपर)

खेती दुनिया

www.khetiduniyan.in

Excellence in Agri Info

KHETI DUNIYAN, PATIALA

All Subject to Patiala Jurisdiction.

BOOK POST – PRINTED MATTER

KHETI DUNIYAN

• Issue Dated 21-10-2023• Vol.7 No.42 • H.O. : KD Complex, Gaushala Road, Patiala-147001 (Pb.) Ph. : 0175-2214575 • Page : 08 E-mail : khetiduniyan1983@gmail.com

गेहूं के न्यूनतम समर्थन मूल्य (एम.एस.पी.) में 150 रुपए की बढ़ोत्तरी

5 अन्य रबी फसलों के न्यूनतम समर्थन मूल्य में भी बढ़ोत्तरी

केंद्र सरकार द्वारा रबी सीजन (विपणन सत्र 2024-25) के लिए विभिन्न फसलों के न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) में बढ़ोतरी की, जिसमें गेहूं में 150 रुपये और सरसों में 200 रुपये प्रति क्विंटल की बढ़ोतरी करने की घोषणा की गई। मध्य प्रदेश और राजस्थान जैसे प्रमुख गेहूं उत्पादक राज्यों में विधानसभा चुनाव से पहले सरकार ने यह कदम उठाया है। साल 2014 में सत्ता में आने के बाद प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की अगुवाई वाली सरकार द्वारा एम. एस.पी. में की गई यह सबसे बड़ी वृद्धि है।

इसके अलावा रबी की पांच अन्य फसलों चना, जौं, मसूर, रैपसीड-सरसों के बीज और कुसुम (सैफ्लॉवर) का न्यूनतम समर्थन मूल्य भी बढ़ाया गया है। केन्द्रीय मंत्री अनुराग ठाकर ने कहा कि कृषि लागत एवं मूल्य आयोग की सिफारिश के आधार पर छह रबी फसलों के एम.एस.पी. में वृद्धि की गई है।

फसल	बढ़ोत्तरी (प्रति क्विंटल)	एम.एस.पी.
गेहूं	150	2,275
सरसों	200	5,650
जौं	115	1,850
चना	105	5,440
मसूर	425	6,425
कुसुम	150	5,800

इस प्रकार गेहूं का एमएसपी बढ़ कर 2,275 रुपये प्रति क्विंटल हो जाएगा जबकि रेपसीड और सरसों के लिए यह 5,650 रुपये होगा। मसूर का एमएसपी 425 रुपये प्रति क्विंटल की बढ़ोतरी के बाद 6,425 रुपये होगा। कुसुम का एमएसपी 150 रुपये प्रति क्विंटल बढ़ाकर 5,800 रुपये कर दिया गया है। जौं और चने का समर्थन मूल्य 115 रुपये और 105 रुपये बढ़ाया गया है, जिससे ये क्रमशः 1,850 रुपये और 5,440 रुपये प्रति क्विंटल हो गए हैं।

सोलन से हुई थी खेती की शुरूआत

हिमाचल में फूलों का कारोबार, 100 करोड़ पार

हरियाणा, पंजाब, चंडीगढ़ व दिल्ली में रहती है बेमौसमी फूलों की भारी मांग

हिमाचल में सोलन ज़िला को फूलों की खेती का जनक माना जाता है। सोलन ज़िला के चायल क्षेत्र से शुरू हुई फूलों की खेती अब प्रदेश में प्रति वर्ष 100 करोड़ से अधिक कारोबार कर रही है। यहां की जलवायु के कारण फूलों की खेती की अपार संभावनाएं हैं। हिमाचल में बेमौसमी फूलों की खेती होती है, जिसकी पंजाब, हरियाणा, चंडीगढ़ व दिल्ली की मंडियों में भारी मांग रहती है। प्रदेश के किसान अब फूलों की खेती से अच्छी आय अर्जित कर रहे हैं।

दोची फार्म हाउस में 80 के दशक में उगाए गए विदेशी फूल

चायल के दोची में महाराजा पटियाला का फार्म हाउस है। यहां 80 के दशक में विदेशी फूल उगाए गए। दोची के साथ लगते महोग गांव के लोगों ने भी यहां फूल देखे तो उन्होंने भी फूलों की खेती करने का मन बनाया। महोग गांव के प्रगतिशील पुष्प उत्पादक आत्मस्वरूप, मदन चौहान, बाबू राम, प्यारे लाल, ओम प्रकाश ने परम्परागत खेती को छोड़ कर फूलों की व्यावसायिक खेती शुरू की। पहले पहल किसानों ने खुले में ही फूलों की खेती की, जिससे अच्छी पैदावार और फूलों की खेती को बढ़ावा देने के लिए उद्यान विभाग ने यहां अपना सैंटर खोला।

कोविड से हुआ था नुकसान, अब दोबारा खिलने लगे फूल

आदर्श पुष्प केन्द्र महोगबाग से मिले आंकड़ों के मुताबिक हिमाचल प्रदेश में करीब 800 हैक्टेयर भूमि पर फूलों की खेती की जाती थी, लेकिन कोविड के समय पुष्प उत्पादकों को भारी आर्थिक नुकसान उठाना पड़ा था। इससे प्रदेश में फूलों का उत्पादन लगभग आधा हो गया था। कोविड खत्म होने के बाद अब दोबारा से लोग व्यवसायिक पुष्प उत्पादन करने लगे हैं। भले ही प्रदेश में सोलन ज़िला से पुष्प उत्पादन की शुरूआत हुई हो, लेकिन पुष्प उत्पादन में सिरमौर ज़िला अव्वल है।

आदर्श पुष्प केन्द्र बना महोग बाग

चायल क्षेत्र का जलवायु फूलों की खेती के लिए अनुकूल है। यहां फूलों की अच्छी पैदावार को देखते हुए उद्यान विभाग ने वर्ष 1994-95 में महोग बाग को आदर्श पुष्प केन्द्र बनाया। केन्द्र की स्थापना के बाद यहां किसानों को फूलों की खेती का प्रशिक्षण दिया जाने लगा। चायल क्षेत्र के अलावा प्रदेश के अन्य क्षेत्रों में फूलों की ट्यूलिप, लीलियम, कारनेशन, ग्लेडियोलस, गुलदाउदी, गुडेशिया, गुलाब, एस्ट्रोमेरिया समेत कई किस्मों की खेती हो रही है।

महोगबाग में है फूलों की टिशू कल्चर लैब : डॉ. हिमराल

आदर्श पुष्प केन्द्र महोगबाग के प्रभारी व विषयवाद विशेषज्ञ डॉ. प्रदीप हिमराल ने बताया कि महोग से प्रदेश में फूलों की खेती की शुरूआत हुई है। उन्होंने बताया कि प्रदेश के किसानों को अच्छी क्वालिटी के फूल मिले, इसके लिए महोगबाग में विभाग की ओर से टिशू कल्चर लैब भी स्थापित की गई है।

2014 से पराली को बिना जलाए 21 एकड़ में कर रहे फसल

मुक्तसर ज़िले का किसान जतिंदरपाल सिंह निवासी गांव सुखना अबलू ब्लॉक गिद्धड़बाहा वर्ष 2014 से पराली की गांठें बना कर पराली का प्रबंधन कर रहा है। गत् 3 वर्ष से सुपर सीडर मशीन से गेहूं की बुवाई करके धान व बासमती की पराली को आग नहीं लगा रहा और दूसरे किसानों को जागरूक कर रहा है। किसान जतिंदरपाल सिंह के अनुसार, वह कुल 32 एकड़ में खेती करते हैं, जिसमें 7 एकड़ में पी.आर.-126 की सीधी बुवाई की है और बाकी में बासमती मसूल 1401 की किस्म है। वह पंजाब कृषि विश्वविद्यालय की सलाह पर अपने खेत में वर्ष 2014 से पराली की गांठ बना कर पराली का प्रबंधन करते आ रहे हैं। गत् 3 सालों से सुपर सीडर मशीन से गेहूं की बुवाई कर रहे हैं व धान और बासमती की पराली को आग नहीं लगा रहे। सफल किसान जतिंदरपाल सिंह वातावरण को साफ-सुथरा रखने में अपना योगदान दे रहा है। वहीं यह पराली का सही ढंग से प्रबंधन करने के अलावा गेहूं के नाड़ को भी अपने खेत में ही जोत रहे हैं। मुख्य खेतीबाड़ी अधिकारी गुरप्रीत सिंह, भूपिंदर कुमार ब्लॉक खेतीबाड़ी अधिकारी, नरिंदर कुमार एडीओ, मनिंदरदीप सिंह एडीओ ने कहा कि पराली और इसके अवशेषों को आग न लगाएं।

Kan Biosys
THE MICROBIAL COMPANY

Job Vacancy

कॅन बायोसिस

कॅन बायोसिस प्रा.लि.ग्लोबल माइक्रोबियल कंपनी में
एरिया सेल्स मैनेजर, टेरिटरी मैनेजर, फील्ड असिस्टेंट, एग्रोनॉमिस्ट

पंजाब
हरियाणा

पद संख्या : 20

योग्यता: B.Sc.Agri./M.Sc.Agri

अनुभव:
एरिया सेल्स मैनेजर - 5 साल
टेरिटरी मैनेजर - 2 से 3 साल
फील्ड असिस्टेंट - 1 से 2 साल
एग्रोनॉमिस्ट - 4 से 5 साल

8484006196 | hr@kanbiosys.com

"वैश्विक स्तर पर भी, खेती का परिदृश्य इतना ही निराशाजनक है। यदि कृषि में बड़े पैमाने पर घरेलू समर्थन जो 2019-21 में सार्वजनिक बजट से भुगतान किया गया 500 बिलियन डॉलर वापस ले लिया गया, तो विकसित देशों में खेती में जो कुछ भी बाकी है, उसका पतन निश्चित है। सरल शब्दों में कहें तो खेती करने वाली आबादी को लगातार वेंटिलेटर पर रखने का निरंतर प्रयास ही किसानों को जीवित रखता है, और किसी तरह से सभी रुकावटों के खिलाफ संघर्ष करने का बंदोबस्त करता है।"

किसान की जीवन निर्वाह आय यकीनी बनाएं

किसानों के लिए जीवन निर्वाह आय की विभिन्न परिभाषाएं दी जाती रही हैं। इसको लेकर एक परिभाषा 1.8 मिलियन से अधिक किसानों के सहकार वाले वैश्विक आंदोलन फेयरट्रेड इंटरनेशनल ने भी दी है जिसके मुताबिक, घर के सभी सदस्यों के लिए एक सभ्य जीवन स्तर वहन करने के लिए पर्याप्त आय- जिसमें पौष्टिक आहार, स्वच्छ पानी, ठीक-ठाक आवास, शिक्षा, स्वास्थ्य देखभाल और अन्य मूलभूत जरूरतों के साथ ही आपातकालीन स्थिति और बचत के लिए थोड़ा अतिरिक्तङ्क उसके बाद जब एक बार कृषि लागत कवर हो जाये।'

अपने विनम्र ढंग से मैं लगातार उस आर्थिक नुकसान की ओर ध्यान दिलाता रहा हूं जिसे भारतीय किसान झेल रहे हैं। किसानों को जीवन निर्वाह योग्य आमदन देने में आनाकानी ने कृषि संकट को बढ़ावा दिया है। दशकों से, हालांकि कृषि पैदावार में आशातीत वृद्धि हुई है लेकिन किसान की आय में सतत गिरावट जारी रही है। कई तरह से, यह कहना गलत नहीं होगा कि पैदावार में वृद्धि कृषक परिवारों की असल आमदन में औसत गिरावट की विपरीत समानुपातिक रही है।

साल 2016 के आर्थिक सर्वेक्षण के अनुसार, भारत के 17 राज्यों में, यानी तकरीबन आधे देश में किसानों की औसत आमदन मात्र 20,000 रुपये यानी 241 डॉलर प्रति वर्ष थी। इसका अर्थ है कि एक औसत किसान परिवार 1,700 रुपये यानी 21 डॉलर प्रति माह से कम में गुजर-बसर कर रहा था। यदि आप गांव में रहते हैं तो यह आय एक गाय पालने के लिए भी काफी नहीं है। ऐसी हास्यास्पद आय के साथ, किसान जिस दुख और अभाव की स्थिति में रहते हैं उसकी यकीनी तौर पर कल्पना की जा सकती है।

यह दयनीय आय स्तर आधे देश में रह रहे किसानों के लिए है। परंतु राष्ट्रीय स्तर पर भी तसवीर इतनी ही अपमानजनक है। कृषक परिवारों के लिए सिचुएशनल एसेसमेंट सर्वे 2019 के मुताबिक, किसान परिवार की सभी स्रोतों से औसत मासिक आय मात्र 10218 रुपये यानी 123 डॉलर बनती है। यह मानते हुए कि देश की कुल जनसंख्या का लगभग 50 फीसदी हिस्सा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष तौर पर खेती में कार्यरत है, किसानों की दुर्दशा के पीछे मौजूद प्राथमिक वजह साफ तौर पर समझे जाने योग्य है।

वैश्विक स्तर पर भी, खेती का परिदृश्य इतना ही निराशाजनक है। यदि कृषि में बड़े पैमाने पर घरेलू समर्थन जो 2019-21 में सार्वजनिक बजट से भुगतान किया गया 500 बिलियन डॉलर वापस ले लिया गया, तो विकसित देशों में खेती में जो कुछ भी बाकी है, उसका पतन निश्चित है। सरल शब्दों में कहें तो खेती करने वाली आबादी को लगातार वेंटिलेटर पर रखने का निरंतर प्रयास ही किसानों को जीवित रखता है, और किसी तरह से सभी रुकावटों के खिलाफ संघर्ष करने का बंदोबस्त करता है।

दुनिया के सामने आ रहा खेती से यह पलायन एक आर्थिक षड्यंत्र का परिणाम है जिसने जानबूझकर खेती को गरीब बनाए रखा है। अन्य शब्दों में, विश्व स्तर पर और राष्ट्रीय स्तर पर भी, यह आर्थिक डिजाइन है जिसने कृषक परिवारों को जीवन निर्वाह योग्य आय से महरूम कर दिया है, जिससे कृषि के पराभव को और बदतर कर दिया है। इस अहम मोड़ पर, फेयर ट्रेड, सॉलिडेरिडाड, रेनफॉरेस्ट एलायंस,

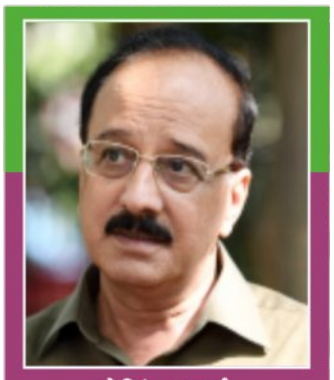

देविंदर शर्मा

ऑक्सफैम और माइटी अर्थ सहित 70 अंतर्राष्ट्रीय सिविल सोसायटी संगठनों (सीएसओ) के एक ग्रुप को यूरोपीय संघ के कॉरपोरेट सस्टेनेबिलिटी ड्यू डिलिजेंस निर्देश (सीएसडीडीडी) में संशोधन की मांग करते हुए देखना बहुत खुशी की बात है जो प्रस्ताव में जीवन निर्वाह आमदन और खरी खरीद प्रथाओं को शामिल करने के लिए है।'हम सीएसडीडीडी और कंपनियों की वैश्विक मूल्य शृंखलाओं के मानव अधिकारों और पर्यावरणीय प्रभाव को संबोधित करने के इसके लक्ष्य का स्वागत करते हैं। हालांकि, सकारात्मक बदलावों को लाने के लिए, इसे अधिकार धारकों के हितों और जरूरतों को ध्यान में रखना चाहिए, खास तौर पर उनके जो वैश्विक मूल्य शृंखलाओं में सबसे कमजोर हैं।'

हालांकि यूरोपियन संसद ने पहले ही जीवन निर्वाह आय का संदर्भ (अनुलग्नक का भाग 1, उपशीर्षक 1, बिंदु 7) शामिल कर लिया है जिसमें कहा गया है कि काम की न्यायसंगत और अनुकूल परिस्थितियों का आनंद लेने का अधिकार, जिसमें सभ्य जिंदगी जीने के योग्य पारिश्रमिक भी शामिल है। सीएसओ की संयुक्त याचिका में 'स्वरोजगार वाले श्रमिकों के लिए जीवन निर्वाह योग्य मजदूरी और छोटे किसानों के लिए जीवन निर्वाह आय का अधिकार दोनों शामिल हैं' जिसमें गुजारे योग्य आय का स्पष्ट संदर्भ मांगा गया है ताकि छोटे भूमालिक और अन्य कमजोर वर्ग वास्तव में लाभ उठा सकें।

यह जानते हुए कि छोटे भूमालिक दुनिया की कुल खाद्य आपूर्ति का एक तिहाई हिस्सा पैदा करते हैं और मूल निवासी एवं स्थानीय समुदाय वनों के करीब 1 बिलियन हेक्टेयर का प्रबंधन करते हैं, उनकी गुजारे लायक आजीविका सुरक्षा यकीनी बनाना महत्वपूर्ण है। ये समुदाय समाज के शंकु के निचले पायदान रहते हैं। गरीबी से पार पाने को इन संवेदनशील समुदायों के लिए निर्वाह योग्य आय के साथ गुजारे योग्य पारिश्रमिक सुनिश्चित बनाना जरूरी है। जबकि जी-20 का प्रयास ग्लोबल वेल्यू शृंखलाओं को मजबूती प्रदान करना है लेकिन इन कंपनियों को आधारभूत कच्चे माल के उत्पादकों के लिए आय सुरक्षा प्रदान करने का स्पष्ट निर्देश शामिल करना कभी किसी नीति निर्देशक का हिस्सा नहीं रहा है।

एक लेख 'नो सस्टेनेबल वर्ल्ड विदाउट ए लिविंग इनकम फॉर फार्मर्स' (फेयर फूड, 22 सितंबर 2021) में मैंने बात की थी कि कैसे कुछेक बहुराष्ट्रीय कंपनियों के हाथ में शक्ति केंद्रीकृत होने का परिणाम अनुचित व्यापार व्यवहार के रूप में सामने है जिसने एशिया अफ्रीका और लेटिन अमेरिका में लाखों छोटे किसानों और भूमिहीन श्रमिकों की आजीविका को प्रभावित किया।

कॉफी का मामला ही लें, जो 200 बिलियन डॉलर की इंडस्ट्री है, प्रतिदिन 3 अरब कप गटके जाते हैं, इसके बावजूद अधिकतर कॉफी बीन उत्पादक रोजाना 2.15 डॉलर में घोर अंतर्राष्ट्रीय गरीबी रेखा के नीचे जीवन जीते हैं। केवल कॉफी के लिए ही नहीं, बल्कि यह बात उन सभी कृषि पदार्थों के लिए है जिनका वैश्विक स्तर पर व्यापार होता है। जबकि मूल्य शृंखलाओं का ऊपरी वर्ग जमकर लाभ कमाता है वहीं शृंखला के निम्नतम तल पर मौजूद गरीब उत्पादकों पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता है। ज्यादातर मामलों में वेल्यू चेन का जो हिस्सा कच्चे माल उत्पादकों के पास जाता है वह उत्पादन लागत को भी पूरी नहीं करता है।

भारत में डेयरी को-आपरेटिव्स के अनुभव से सीखा जा सकता है, जिसमें डेयरी किसान को अंतिम उपभोक्ता कीमत का 80 फीसदी प्राप्त होता है। अब यह आकलन करने का समय आ गया है कि ग्लोबल वेल्यू चेन के कारोबार के कितने फीसदी को जीवन निर्वाह आय के रूप में वर्गीकृत किया जाये। यह तथ्य कि उपभोक्ता कीमत का डेयरी किसान को मिलने वाला हिस्सा इतना ज्यादा है फिर भी निजी क्षेत्र समेत भारत में मिल्क प्लांट घाटे में नहीं हैं, स्पष्टतया दर्शाता है कि शेयर को स्पष्ट तौर पर बताना होगा। मेरा सुझाव है कि अंतिम उपभोक्ता कीमत में किसान का हिस्सा 50 फीसदी से कम नहीं होना चाहिये।

ऐतिहासिक रूप से लालची वैश्विक मूल्य शृंखला द्वारा छोटे भू-मालिकों, किसानों और पशु पालकों को अधिकारपूर्ण देय से वंचित रखा गया। केवल ईयू में ही नहीं बल्कि इस तरह के निर्देश का भारत जैसे देशों और बाकी विकासशील विश्व में भी अनुकरण किया जाना चाहिये। यह उस आय असमानता की खाई को पाटने में मददगार होगा जिससे दुनिया जूझ रही है और नहीं जानती कि इससे बाहर आने की राह क्या है।

लेखक कृषि मामलों के जानकार हैं।

शीघ्र पकने वाली किस्में ही पराली संकट का समाधान

डॉ. वीरेन्द्र सिंह लाठर,
पूर्व प्रधान वैज्ञानिक, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली (मो. 94168–01607)

भारत सहित दुनियाभर में किसान धान की लगभग 80 प्रतिशत पराली को जलाते हैं जिससे गंभीर वायु प्रदूषण फैलता है। इस वजह से हर साल भारत के घनी आबादी व औद्योगिक घनत्व वाले राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में अक्तूबर–नवम्बर महीनों में वायु की गति कम होने और ठंडी हवा आने के साथ वायु प्रदूषण समस्या गंभीर हो जाती है। इसके समाधान के लिए केन्द्र और राज्य सरकारें वर्षों से हजारों करोड़ रुपये व्यय करती आ रही हैं लेकिन कामयाबी नहीं मिली।

दरअसल, देश के उत्तर पश्चिम मैदानी क्षेत्र में हरित क्रांति के दौर में (1967–1975) नीति–नियंताओं द्वारा प्रायोजित धान–गेहूं फसल चक्र ने पिछले पांच दशकों से राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा और लगभग एक लाख करोड़ रुपये वार्षिक निर्यात को तो सुनिश्चित

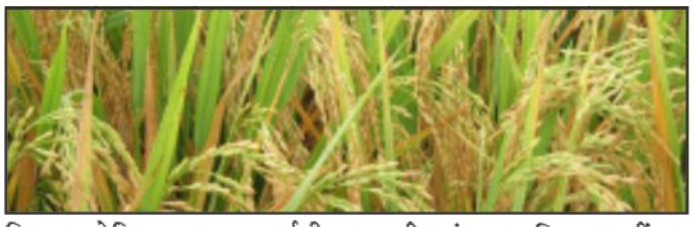

किया, लेकिन भूजल बर्बादी, पर्यावरण प्रदूषण जैसी समस्या को बढ़ाया। फसल विविधीकरण के सभी सरकारी प्रयासों के बावजूद धान–गेहूं फसल चक्र पंजाब, हरियाणा व पश्चिम उत्तर प्रदेश आदि में लगभग 70 लाख हेक्टेयर भूमि पर अपनाया जा रहा है। इस क्षेत्र में मौसम इनके अनुकूल है वहीं गन्ने की खेती के अलावा धान–गेहूं किसानों के लिए ज्यादा फायदेमंद है।

उत्तर पश्चिम भारत के प्रदेशों में धान–गेहूं फसल चक्र में लगभग 40 क्विंटल फसल अवशेष प्रति एकड़ पैदा होते हैं जिसमें से आधे यानी 20 क्विंटल गेहूं भूसे का प्रबंधन खास समस्या नहीं है, क्योंकि पशुचारे के रूप में भूसा उपयोगी है वहीं अगली फसल बुआई की तैयारी के लिए करीब 50–60 दिन मिलने के कारण किसान भूसे का प्रबंधन आसानी से कर लेते हैं। लेकिन बाकी आधे फसल अवशेष यानी धान पराली का प्रबंधन किसानों के लिए गंभीर समस्या है क्योंकि पराली आमतौर पर चारे के लिए उपयोगी नहीं। वहीं अगली फसल की बुआई की तैयारी में 20 दिन से भी कम समय मिलता है। ऐसे में, धान कटाई के बाद पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश समेत अन्य राज्यों में भारी मात्रा में किसान पराली जलाते हैं। जिससे अक्तूबर–नवंबर में राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र सहित जम्मू से कोलकाता तक बड़े क्षेत्र में वायु प्रदूषण समस्या पैदा होती है। इससे भूमि की उर्वरा शक्ति भी प्रभावित होती है।

पराली जलाने की घटनाओं को रोकने के लिए पिछले कुछ वर्षों से प्रदेश सरकारें व वायु गुणवत्ता प्रबंधन आयोग, किसानों पर जुर्माना लगाने, बायो–डीकंपोजर से पराली गलाने, जैसे प्रयास कर रही हैं जिनके अभी तक सार्थक परिणाम नहीं मिले। पूसा डीकंपोजर के प्रायोजक पूसा संस्थान का मानना है कि डीकंपोजर घोल के छिड़काव से 25 दिन बाद पराली कुछ नरम तो होती है, लेकिन इसे पूरी गलने के लिए करीब 50 दिन चाहिए और बायो–डीकंपोजर मशीनों से पराली प्रबंधन का विकल्प नहीं बन सकता है। वहीं पंजाब कृषि विश्वविद्यालय द्वारा किये गये अनुसंधान बताते हैं कि बायो–डीकंपोजर छिड़काव से खास लाभ नहीं जबकि गहरी जुताई कर पराली भूमि में दबाने और खेत में नमी बनाए रखने से, बिना बायो–डीकंपोजर भी पराली 7 सप्ताह में ही गल जाती है।

धान पराली व फसल अवशेष प्रबंधन पर सभी अनुसंधान और तकनीकी रिपोर्ट एकमत हैं कि मशीनों द्वारा फसल अवशेषों को खेत से बाहर निकाल कर उद्योगों में इस्तेमाल करना सर्वोत्तम समाधान है जैसा कि अमेरिका आदि देशों में हो रहा है। लेकिन भारत में छोटी जोत होने से किसान भारी मशीनें नहीं खरीद सकते हैं। ऐसे में पराली को भूमि में मिलाना ही व्यावहारिक उपाय है। यह तभी सम्भव है जब पराली को दबाने और गलाने के लिए 45–50 दिन मिल सकें।

कृषि वैज्ञानिकों और नीतिकारों को उत्तर पश्चिम भारत के लिए, धान की खेती के लिए किसान और पर्यावरण हितैषी नयी तकनीक और बुआई कलेंडर आदि विकसित करने होंगे। ऐसे में धान की सीधी बिजाई पद्धति में कम अवधि वाली किस्में कारगर समाधान है।

धान कटाई के बाद रबी फसलों गेहूं, सरसों आदि की बुआई की तैयारी के लिए कम समय मिलने के कारण ही किसान मजबूरन पराली जलाते हैं। इसके लिए धान की सीधी बिजाई पद्धति में कम अवधि वाली धान किस्मों (पीआर–126, पीबी–1509 आदि) को प्रोत्साहन एक कारगर उपाय साबित होगा। वहीं लम्बी अवधि वाली किस्मों पर प्रतिबंध जरूरी है। जिसमें धान की बुआई 20 मई से शुरू हो कर कटाई 30 सितम्बर तक हो जाती है। रोपाई के बजाय सीधी बिजाई में धान की सभी किस्में 10 दिन जल्दी पक जाती हैं। ऐसे में गेहूं की बुआई से पहले किसान को लगभग 45–50 दिन धान पराली प्रबंधन के लिए मिलते हैं। जिसका सदुपयोग करके फसल चक्र के बीच हरी खाद के लिए ढैंचा, मूंग आदि उगा सकते हैं। इससे पराली जलाने से होने वाले पर्यावरण प्रदूषण में कमी आयेगी, भूमि की उर्वरा शक्ति बनाए रखने में मदद मिलेगी और रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता भी कम होगी।

सरकार इन प्रदेशों में अगर धान की सरकारी खरीद की समय सारणी 15 सितम्बर से 10 अक्तूबर तक तय करे, तो किसान धान की सीधी बिजाई पद्धति में कम अवधि वाली धान किस्मों को ही अपनायेंगे। इससे लगभग एक–तिहाई भूजल, ऊर्जा और लागत में बचत के साथ प्रदूषण भी कम होगा। इस वर्ष खरीफ 2023 सीजन में, हरियाणा में धान की सीधी बिजाई प्रोत्साहन योजना के सकारात्मक नतीजे के कारण, प्रदेश के किसानों ने तीन लाख एकड़ से ज्यादा भूमि पर सीधी बिजाई विधि को अपनाया। जो इस पर्यावरण हितैषी विधि में किसानों के विश्वास को दर्शाता है।

खेती दुनिया

KHETI DUNIYAN

मुख्य कार्यालय

के.डी. कॉम्पलैक्स, गऊशाला रोड, नजदीक शेरे पंजाब मार्केट, पटियाला - 147001 (पंजाब)

फोन : 0175-2214575

मो. 90410-14575

E-mail : kdpublications@yahoo.co.in

वर्ष : 07 अंक : 42

तिथि : 21-10-2023

सम्पादक

जगप्रीत सिंह

मुख्य शाखाएं

पटियाला

फोन : 0175-2214575

मो. 90410-14575

मुम्बई

दिल्ली

लुधियाना

बण्ठिडा

सम्पादकीय बोर्ड

डॉ. डी.डी. नारंग

डॉ. जे.एस. डाल

डॉ. आर.एम. फुलझेले

कम्पोजिंग

एक्ता कम्प्यूटरज़ पटियाला

Editor, Printer & Publisher **JAGPREET SINGH**
Printed at **Vargenia Printers**, Sher-e-Punjab Market, Gaushala Road, PATIALA &
Published at Patiala for Prop. **JAGPREET SINGH**

किसानों का बढ़ा रुझान...

ग्रीन-नेट फार्मिंग में खीरे की खेती कर सालाना कमा रहे 20 लाख

पिता की प्रेरणा से ट्रांसपोर्ट का कारोबार छोड़ा, अरविंदर सिंह बॉबी ने सन 2012 में नेट फार्मिंग की शिक्षा ग्रहण कर शिमला मिर्च की खेती शुरू की थी

दिल्ली में ट्रांसपोर्ट कारोबार से जुड़े अरविंदर सिंह बॉबी आज गांव में ग्रीन एवं नेट फार्मिंग में खीरे की खेती कर सालाना करीब 20 लाख रुपए कमा रहे हैं। इतना ही नहीं बस कारोबार को और बढ़ाने के लिए प्रयासरत है। होशियारपुर के हलका दसूहा गांव बेरछा के निवासी अरविंदर सिंह बॉबी पिता के कहने पर

दिल्ली से सारा काम छोड़ 2012 में पंजाब आकर नेट फार्मिंग का काम शुरू किया। नेट फार्मिंग करने के लिए पहले करतारपुर से शिक्षा ग्रहण की। इसके बाद शिमला मिर्च की फार्मिंग शुरू की, लेकिन बाद में वह खीरा उत्पाद करने लगे, क्योंकि नेट फार्मिंग से जुड़े किसानों को मार्केटिंग की ज्यादा जरूरत नहीं होती है। खीरा मंडियों में देखते ही देखते बिक जाता है। ज्यादातर आस-पास की मंडियों के आढ़ती यहां से सप्लाई करवा लेते हैं और पेमेंट भी दे देते हैं। अरविंदर सिंह बॉबी ने बताया कि नेट फार्मिंग में खाद और पानी की जरुरत बहुत कम पड़ती है।

किसान फसल को समय-समय पर देख कर सही खुराक और कीटों से बचा सकते है। लेकिन किसानों को नेट फार्मिंग की शुरूआत करने से पहले ट्रेनिंग अवश्य लेनी चाहिए। बॉबी का कहना है कि सरकार नेट फार्मिंग पर जो सब्सिडी देती है, वह बहुत कम है। पंजाब सरकार 45 फीसदी सब्सिडी देती है और हिमाचल में 80 फीसदी मिलता है। अरविंदर सिंह बॉबी ने बताया कि वह सिर्फ ढाई एकड़ ज़मीन में ही नेट फार्मिंग में खेती कर रहे है, जो आम किसान की 10 एकड़ ज़मीन के बराबर है। सिर्फ खीरे की ही फसल से वह सालाना 20 लाख रुपए कमा रहे हैं। यदि किसान फसली-चक्र को छोड़ कर नेट फार्मिंग की तरफ आएं, तो वह अच्छी कमाई कर सकते हैं।

35 दिन में तैयार कर रहे खीरे की फसल साल में तीन बार लेते हैं

खीरे की फार्मिंग करते हुए अरविंदर सिंह को कई साल हो गए हैं। उन्होंने बताया कि खीरे की फसल में ज्यादा मेहनत नहीं बल्कि सबसे ज्यादा इसकी देख-रेख की ज़रुरत होती है, जिसके लिए रोज़ाना ही इनकी बेलों को चेक किया जाता है। यदि हर चीज़ का ध्यान रखा जाता है, तो 35 दिन में यह फसल तोड़ने लायक हो जाती है। हर बेल से 3 से 5 किलो तक खीरे उतारे जा सकते हैं। 2012 के बाद से शुरू ग्रीन फार्मिंग और नेट फार्मिंग सबसे पहले शिमला मिर्च की पैदावार की ज्यादा मुनाफा न होने पर अब वह खीरे की फसल को ही तैयार कर रहे हैं। जनवरी से मई और सितम्बर माह में वह एक साल में तीन बार यह फसल से लाभ ले रहे हैं। मुनाफा देखते हुए अन्य जगहों पर भी इसी फार्मिंग को बढ़ाने की योजना तैयार कर रहे है।

युवा पीढ़ी ज़मीन बेच विदेश में जाने की बजाए इस खेती की ओर ध्यान दें

अरविंदर सिंह ने पंजाब के नौजवानों से अपील की है कि वह अपनी पुश्तैनी ज़मीन बेच कर विदेश ना जाएं। जितने पैसे लगा कर आज का युवा विदेश का रुख कर रहा है। इस फार्मिंग की पूर्ण शिक्षा ग्रहण करके एक एकड़ में एक प्लांट तैयार कर मोटी आमद ले सकता है। इसके लिए पंजाब सरकार को युवाओं की ओर ध्यान देने की ज़रुरत है।

30 लाख लगा कर पहले एक एकड़ में शुरू की थी फार्मिंग

दिल्ली से गांव लौटने पर उन्होंने गांव में ही पहले 30 लाख रुपए खर्च कर एक एकड़ में ग्रीन फार्मिंग करनी शुरू की। इसके बाद अब नेट फार्मिंग में भी हाथ आजमा कर साल में मोटा मुनाफा कमा रहे हैं। फसल को होशियारपुर, गुरदासपुर, पठानकोट सहित आस-पास की मंडियों में फसल को अच्छे दामों में बेच रहे हैं। इस साल सितंबर माह में 50 रुपए प्रति किलो के हिसाब से मंडियों में फसल को बेच रहे हैं। शहर सहित आस-पास के लोग भी सीधे फार्म का ही रुख कर रहे है।

पक्षी भी यात्रा की पूरी तैयारी करते हैं

प्रति वर्ष ज्यों ही मौसम परिवर्तन होने लगता है, त्यों ही विभिन्न प्रजाति के पक्षियों के बीच यह तय होने लगता है कि वर्तमान स्थान पर रहना चाहिए अथवा नहीं। अनुकूल स्थान पर बच्चा जनने, भोजन की सुविधापूर्वक प्राप्ति आदि ऐसे कारण हैं, जो लाखों पक्षियों को इस प्रकार से सोचने पर विवश कर देते हैं।

पक्षियों के बीच व्याप्त ऐसी धारणा के कारण ही प्रारम्भ हो जाता है उनका सामूहिक पलायन। इस दौरान वे प्राय: 3 से 6 माह तक के लिए अपने मूल स्थान से गमन कर जाते हैं। पक्षियों द्वारा इस प्रकार से स्थान परिवर्तन को ही पक्षी प्रवाह कहा जाता है।

पक्षियों का सामूहिक पलायन मुख्यत: दो रूपों में होता है आंशिक पलायन और पूर्ण पलायन। प्रथम पलायन के अंतर्गत कैफीन, काली चिड़िया, यूरोपियन-कोयल आदि प्रजातियों के पक्षी शामिल हैं, जो अपने जन्म स्थान को तो छोड़ देते हैं, किन्तु वहां से कुछ किलोमीटर की दूरी पर उसके इर्द-गिर्द ही शीतकाल में निवास करते हैं। उल्लेखनीय बात यह है कि इस तरह के प्रवास में मुख्य रूप से युवा तथा मादा पक्षी ही बड़े पैमाने पर भाग लेते हैं।

आनुवांशिक गुणों के कारण पक्षियों में यह बात पूर्व से ही निर्धारित रहती है कि कब प्रवास यात्रा प्रारम्भ हो जाए, यात्रा की दूरी तथा दिशा क्या होगी और क्रम में कहां एवं कितना पड़ाव देना चाहिए।

जिस प्रकार की तैयारी के साथ मनुष्य लम्बी यात्रा पर निकलता है, ठीक उसी प्रकार की तैयारी प्रवास-क्रम के दौरान पक्षी जगत के बीच भी देखी जाती है। इन तैयारियों के अन्तर्गत भोजन, मौसम, उड़ने की ऊंचाई तथा मार्ग आदि का निर्धारण

प्रमुख होता है। ये यात्रा पर निकलने के दो-तीन सप्ताह पूर्व से ही अपने शरीर के विभिन्न भागों - गला, आंत एवं त्वचा में वसा को आवश्यकता अनुसार इकट्ठा कर लेते हैं, जो उड़ने के क्रम में ऊर्जा एवं भोजन प्रदान करने का कार्य करता है।

अध्ययनों द्वारा पता चलता है कि पक्षी प्रस्थान करने के लिए ऐसे मौसम को अनुकूल मानते है, जिससे उन्हें स्पष्ट दिखाई देने के साथ-साथ हवा का रुख भी उनकी पलायन दिशा की ओर तथा मौसम का तापमान 10 डिग्री से अधिक ना हो ताकि उड़ान के समय उनको अधिक पानी की आवश्यकता ना पड़े। अधिकतम ऊंचाई पर उड़ान भरने का अभी तक का रिकॉर्ड विभिन्न प्रजाति के समुद्री पक्षियों का नाम दर्ज है, जो 6000 मीटर तक के ऊंचाई एक सामूहिक रूप में करूज मिसाल की भांति आकृति बना कर बढ़ाते हुए देखे गए हैं।

जिस प्रकार विभिन्न किस्म के हवाई जहाज़ों की गति सीमा निर्धारित होती है, उसी प्रकार पलायन-यात्रा के दौरान विभिन्न प्रजाति के पक्षियों की भी उड़ान-गति तथा दूरी निर्धारित है। विभिन्न अध्ययनों के अनुसार बत्तख तथा गाने वाली चिड़िया आदि की उड़ान गति प्रति घंटा 30 से 80 किलोमीटर के बीच होती है। रेड-नॉट पक्षी उत्तरी-दक्षिण समुद्र तट से नार्वे तक की लगभग 1800 किलोमीटर की दूरी दो दिन में पूरी करते हैं। टर्न-स्टोन नामक पक्षी तीन दिन में आर्कटिक प्रदेश से लेकर हवाई द्वीप तक की करीब 4500 किलोमीटर की दूरी तय करते हैं, जबकि आर्कटिक टर्न उत्तरी अक्षांश से लेकर अंटार्कटिका क्षेत्र के बीच में यात्रा के दौरान 10,000 किलोमीटर तथा अपने पूरे जीवन काल के दौरान वे लगभग 1,00,000 किलोमीटर की दूरी तय करते हैं। वैज्ञानिकों द्वारा पक्षियों की उड़ान-गति शांत हवा में निर्धारित की जाती है।

पक्षियों के इस वार्षिक प्रवास-क्रम के दौरान सबसे रोचक बात यह होती है कि वे अपने गंतव्य की ओर प्रस्थान करते हैं, तो उनके दिमाग में मार्ग का पूरा-पूरा मानचित्र हमेशा के लिए अंकित हो जाता है। इस रहस्य पर से पर्दा उठाने के लिए पक्षी वैज्ञानिक ने एक प्रयोग किया। सारिका तथा मैना प्रजाति के कुछ पक्षियों, जो हालैंड से फ्रांस जाने केलिए उड़ानें भर रहे थे, को वैज्ञानिकों ने पकड़ कर स्विट्जरलैंड भेज दिया। कुछ दिन बाद जब उनको मुक्त किया तो उनमें से वयस्क पक्षी तो वापस अपनी मंजिल पर पहुंच गए, जबकि युवा पक्षी स्विट्जरलैंड के ही इर्द-गिर्द भटक गए।

सर्वप्रथम जर्मनी के हेलिगौलैंड में ही 19वीं सदी में पक्षी वैज्ञानिक हेनरिक गेटके ने एक पक्षी वैद्यशाला की स्थापना की। पुन: विभिन्न देशों के पलायित पक्षियों की पहचान के लिए डेनमार्क के वैज्ञानिक माटेसेन ने नाम एवं पता लिखी एल्यूमीनियम की मुद्रिका परिंदों के पैरों में पहनाने की प्रथा शुरू की।

फिर आया मौसम पराली के धुएं पर राजनीति का

हर साल उत्तर भारत में अक्तूबर महीने की शुरूआत के साथ ही आसमान में धुएं के गुबार दिखने का दौर शुरू हो जाता है। इस ज़हरीले धुएं का सबसे बड़ा कारण पराली जलाना बताया जाता है। दरअसल जलाई जा रही पराली के धुएं से प्रदूषण पर सत्ता-विपक्ष से लेकर टी.वी. पर चलने वाली बहसों में आरोप-प्रत्यारोप उफान पर होते हैं।

प्रिं. डॉ. मोहन लाल शर्मा

अक्तूबर महीने की शुरूआत से ही नवम्बर अंत तक पूरे देश में पंजाब में जल रही पराली पर जम कर बहस होती है। लेकिन धीरे-धीरे इसका कुहासा भी छंटता है और नया साल आते-आते कुछ दिनों में सब कुछ भुला दिया जाता है।

पूरा देश राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली-एन.सी.आर. के प्रदूषण की देख कर दंग रहता है और केवल पंजाब की जलती पराली को कोसा जाता है। लेकिन हकीकत यह है कि देश के दूसरे कई भागों में भी इससे कम या बराबर ऐसा ही प्रदूषण रहता है।

कहीं इसे पुआल, परड़ा तो कहीं पइरा भी कहते हैं और तब इस पर कोई खास आवाज़ नहीं उठती। एक सच्चाई यह भी है कि इसी नवम्बर के पहले हफ्ते में दुनिया के सबसे प्रदूषित देशों में हम शीर्ष पर रहते हैं। वायु प्रदूषण में पराली जलाने के साथ दिवाली के पटाखों का धुआं भी शामिल होता है।

सवाल तो इस बात का है कि आखिर वायु प्रदूषण है क्या और इस पर इतनी चिंता व बहस कैसी? यकीनन पराली जलाना एक गंभीर समस्या है। यह समस्या आज की नहीं, बल्कि बरसों से है। विडंबना यह है कि इसे रोकने के लिए कोई खास उपाय न कर इस पर हर साल दो महीने सियासत निश्चित रूप से होती है। किसानों के पास न तो वक्त होता है और न ही पैसे, जिससे वे इसके निस्तारण का कोई दूसरा रास्ता निकाल सकें। मज़बूरी और दूसरी फसलें लगाने की जल्दबाजी में इसे जलाना ही एकमात्र सस्ता और सुलभ विकल्प बचता है। यह भी सच है कि इस पर काफी पैसा खर्चा गया लेकिन नतीजा नगण्य रहा। यह नहीं भूलना चाहिए कि हवा की गुणवत्ता बिगड़ने से पैदा हुए प्रदूषण से हर साल भारत सहित दुनिया में लाखों मौतें होती हैं। दरअसल, हमारे वायुमंडल में उपलब्ध रहने वाली सारी गैसों की मात्रा का संतुलन प्राकृतिक रूप से तय होता है। इनके बिगड़ने से हवा की गुणवत्ता बिगड़ती है। यह असंतुलन प्राकृतिक कारकों से ज्यादा इंसानी गतिविधियों से होता है।

वैसे तो पराली न जलाए जाने के लिए हो रहे प्रयास अपना रंग दिखा रहे है, परन्तु जागरूक किसानों के बीच अब भी हज़ारों की संख्या में किसान पराली जलाने से तौबा नहीं कर रहे। सूबे में करीब 30 लाख हैक्टेयर रकबे में धान की खेती से करीब 22 लाख टन पराली पैदा हो रही है। किसान धान की फसल को तो मुनाफे के लिए काट रहे है, लेकिन फसल के अवशेष आग के हवाले कर रहे हैं। धान की कंबाइनों के साथ कटाई के बाद खेतों में बचने वाले पराली और नाड़ के बड़े हिस्से को गेहूं की बुवाई से पहले खेत में ही जला दिया जाता है। इससे न केवल भूमि की उपजाऊ शक्ति, बल्कि पर्यावरण को नुकसान पहुंचता है, जिसका खामियाजा इंसानों के अलावा बेकसूर जीव-जंतु भी भुगतते हैं।

पंजाब हर साल जलाई जाने वाली पराली से करीब 1.50 से 1.60 लाख टन नाइट्रोजन और सल्फर के अलावा जैविक कार्बन भी नष्ट हो जाती है। विशेषज्ञों के अनुसार अगर इतनी मात्रा में नाइट्रोजन और सल्फर को बाज़ार से खरीदना पड़े तो इसके लिए 160 से 170 करोड़ रुपए खर्च करने पड़ेंगे। पी.ए.यू. के वैज्ञानिकों की शोध के अनुसार एक एकड़ की पराली में करीब 10-18 किलो नाइट्रोजन, 3.2-3.5 किलो फास्फोरस, 56-60 किलो पोटाश, 4-5 किलो सल्फर, 1150-1250 किलो जैविक कार्बन और दूसरे सूक्ष्म तत्व होते है। दूसरे शब्दों में कहें तो एक टन पराली जलाने से 400 किलो जैविक कार्बन, 5.5 किलो नाइट्रोजन, 2.3 किलो फास्फोरस, 25 किलो पोटाश, 1.2 किलो सल्फर व मिट्टी के बीच के सूक्ष्म तत्वों का नुकसान होता है। वहीं इतने बड़े स्तर पर पराली

को खेतों में जलाए जाने से कार्बन डाइऑक्साइड, कार्बन मोनोऑक्साइड, मीथेन, नाइट्रिक डाइऑक्साइड जैसी गैसें पैदा होती हैं। पी.ए.यू. के अनुसार धान की पराली में से निकलने वाली गैसों में 70 प्रतिशत कार्बन डाइऑक्साड, 7 प्रतिशत कार्बन मोनोऑक्साइड, 0.66 प्रतिशत मीथेन व 2.09 प्रतिशत नाइट्रिक ऑक्साइड जैसी गैसें और ऑर्गेनिक कम्पाउंड हाते है, जिनसे इंसानों व पशुओं की सेहत को नुकसान होता है।

नैशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल में इसे लेकर केस भी लगा हुआ है। सवाल फिर वही कि अब नहीं तो कब चेतेंगे? हम अपनी नई पीढ़ी को क्या दे रहे हैं? कभी चेचक, हैजा, पोलियो, कुष्ठ रोग असाध्य थे, लेकिन अब नहीं। जिस तरह हमने संक्रामक रोगों को मौतों का सबब बनते देखा और हाल में कोरोना महामारी जैसी विकरालता पर काबू पा बड़ी सफलता पाई, तो क्या वैसा ही कुछ पराली, नरवाई और दूसरे स्त्रोतों से फैलते ज़हरीले धुएं को रोकने के लिए नहीं किया जा सकता? सवाल यह है कि विकास के नाम पर प्रकृति से ऐसी ज्यादती कब तक करते रहेंगे? पर्यावरण को प्रदूषण से बचाने के लिए राजनीतिक इच्छा और प्रतिबद्धता दोनों ज़रुरी है, जो आज किसी भी दल या सरकार के पास नहीं दिखतीं। इसलिए लगता नहीं कि पंच, सरपंच से लेकर विधायक, सांसद और सभी राज्य मिल कर राजनीति से इतर अपनी सुनिश्चित और ईमानदार भागीदारी निभाएंगे।

सच कहा जाए तो जलती पराली भी राजनीति का शिकार है, जो 2 महीने की चीख-पुकार के बाद 10 महीने फाइलों में बंद हो जाती है। अब विचार इस बात पर होना चाहिए कि उन्नत तकनीक के इस्तेमाल से पराली का निपटान कैसे हो? हाल ही में चांद के दक्षिण ध्रुव पर पहुंचने की बात हो या एक साथ 104 उपग्रह छोड़ विश्व कीर्तिमान बनाने की, तो क्या हमारे लिए पराली का निपटान इनसे भी बड़ी चुनौती है?

महज घास नहीं, ये हैं औषधियां

हमारे बागीचे या गमलों में कई बार छोटे-छोटे पौधे या घास उग आती है, जिसे जंगली समझ कर अक्सर निकाल दिया जाता है। लेकिन इनमें से कई तरह की घास आयुर्वेद के हिसाब से हमारे स्वास्थ्य के लिए बहुत लाभकारी होती हैं, जिनके बारे में जान कर आप भी इन्हें सहेजना चाहेंगे। ऑल इंडिया इंस्टीट्यूट ऑफ आयुर्वेद-दिल्ली के आचार्य महेश कुमार व्यास के मुताबिक इन घासों में कई किस्म के लाभकारी तत्व होते हैं। आईये उन्हें जानें।

कुल्फा या लूना : यौर्चुला सैकुलेंट फैमिली का कुल्फा पौधा अक्सर दिखाई दे जाता है। इसकी पत्तियों में ओमेगा-3 बहुत ज्यादा मात्रा में मिलता है। इसकी सब्ज़ी या सूप भी बनाई जाती है। अगर आपको ओमेगा-3 चाहिए, तो रिफाइंड की जगह आस-पास मिलने वाली इस घास का इस्तेमाल कर सकते हैं। इसमें विटामिन ई, आयरन, मैग्नीशियम, पोटाशियम जैसे पौष्टिक तत्व भी मिलते हैं। आप चाहें तो इस पौधे को अपने बागीचे में कटिंग या बीज से आसानी से उगा सकते हैं।

अकरकरा : इसमें छोटे-छोटे पीले रंग के फूल भी आते हैं। यह पौधा नमी वाली जगह पर आसानी से उग जाता है। अगर आपके मुंह में छाले हैं, दांत या सिर में दर्द हो तो इसके फूल को हल्का-सा मसल कर प्रभावित जगह पर रखने से आराम मिलता है। यह पौधा कटिंग से भी आसानी से लगाया जा सकता है।

भृंगराज : सिर में लगाए जाने वाले भृंगराज तेल से तो सभी वाकिफ होंगे। इसके छोटे-छोटे पौधे नमी वाली जगहों या बागीचे में क्यारियों के पास आसानी से मिल जाते हैं। लेकिन जानकारी ना होने के कारण जंगली पौधे मान कर अक्सर निकाल दिया जाता है। इसमें छोटे-छोटे सफेद, पीले और नीले फूल आते हैं। इसके पत्तों को हल्का-सा पीस कर बालों में लगाना फायदेमंद होता है।

भूमि आंवला : इसके छोटे-छोटे पौधे घास के रूप में गमलों में भी आसानी से मिल जाते हैं। इसकी पत्तियों के रस का उपयोग फैटी लिवर, पीलिया जैसी बीमारियों की मेडिसिन में किया जाता है। इनके पत्तों के रस को रेगुलर पीना फायदेमंद होता है। इसे च्यवनप्राश में भी इस्तेमाल किया जाता है। पत्तों के रस को घमौरी पर लगाने से आराम मिलता है।

मकोय : इसके पौधे पर छोटे-छोटे टमाटर जैसे फल लगते हैं। लाल या काले रंग के पके फल खाना लाभकारी है। आयुर्वेद में इनके सूखे हुए बीजों का उपयोग डायबिटीज़ के इलाज में किया जाता है। पेट में दर्द, किडनी, लिवर की समस्याओं में मकोय के पत्तों को सब्ज़ी, काढ़ा या पीस कर निकले रस को पी सकते हैं।

चिड़चिड़ा : इसके पौधों के ऊपर लंबी डंडी होती है, जिसमें छोटे-छोटे फल लगते है, जिनके पास से गुजरने पर आपके कपड़ों पर चिपक जाते हैं। इसके पत्तों के पेस्ट का प्रयोग किडनी, पाइल्स, फोड़े-फुंसियों में किया जाता है। पत्तों का काढ़ा खांसी में लाभदायक होता है। इसकी जड़ों का उपयोग सप्ताह में एक बार दातून की तरह करने से दांत दर्द, पायरिया जैसी समस्या में असरदार है।

पुनर्नवा : इसके पत्तों का पाउडर कैप्सूल, टैबलेट के रूप में मिलता है। इनमें पोटाशियम नाइट्रेट और हाइड्रोक्लोराइड बहुत ज्यादा मात्रा में होता है। किडनी में कोई समस्या होने, यूरिन इंफेक्शन में फायदेमंद है। लिपिड या कोलेस्ट्रॉल का लेवल कंट्रोल करता है। पत्तों में पाया जाने वाला मैग्नीशियम ब्लड प्रैशर में उपयोगी है। एंटी एजिंग गुणों के कारण पत्तों का लेप असरदार है। यह पौधा ज़मीन से चिपका होता है और बहुत छोटे फलू भी होते हैं।

दूधी घास : इसके पत्तों का रस छोटी दूधी घास अतिसार, कब्ज़ जैसी पेट संबंधी समस्याओं, नकसीर में असरदार है। खांसी में इसका काढ़ा पीना फायदेमंद है। इन्हें तोड़ने पर दूध जैसा तरल निकलता है। इनके पत्तों से निकला रस मस्सों पर लगाने से खत्म हो जाते हैं।

सत्यानासी या कटेली : पत्थरों वाले स्थान पर सड़क किनारे यह पौधा आसानी से मिल जाता है। इनके पत्तों के पिछले हिस्से में छोटे-छोटे कांटे और पीले रंग के फूल आते हैं। इसके पत्तों का प्रयोग मलेरिया, बुखार, अल्सर, स्किन संबंधी समस्याओं में किया जाता है। जड़ों का उपयोग यूरिन इंफेक्शन में किया जाता है। इसकी जड़ों को अजवायन के साथ मिला कर बने काढ़ा पीने से पुरानी से पुरानी कब्ज़ दूर हो जाती है।

पुलियारी : बहुत आसानी से मिल जाते हैं। इसमें छोटे-छोटे पीले रंग के फूल आते हैं। इसके पत्तों का स्वाद थोड़ा खट्टा होता है, जिनसे चटनी भी बनाई जाती है। ये विटामिन सी और कैल्शियम का अच्छा स्त्रोत मानी जाती है। खूनी दस्त में इसके 15-20 पत्तों का रस पीना फायदेमंद है। चोट लगने की वजह से सूजन हो गई हो, तो पत्तों का पेस्ट लगाने से आराम मिलता है। पेट से जुड़ी समस्या में चटनी खाई जा सकती है। किडनी में स्टोन की समस्या होने पर इन्हें इस्तेमाल नहीं करना चाहिए।

दूब या दुर्वा घास : आसानी से मिलने वाली दूब घास पर पड़ी ओस के ऊपर सुबह नंगे पैर चलने से आंखों की रोशनी बढ़ती है। घास को पीस कर बने पेस्ट को पैरों के तलवों पर लगाने से स्ट्रेस कम होता है। सिरदर्द में इस पेस्ट में थोड़ा-सा चूना मिला कर लगाना फायदेमंद है। नकसीर की समस्या में इसके रस की 3-4 बूंदें डालें। मुंह के छाले हों, तो दूब घास चबा कर थूक दें और ठंडा पानी पिएं। एसिडिटी या अल्सर के लिए खाली पेट घास का एक चम्मच रस पीकर उसके ऊपर पानी पीना फायदेमंद है।

लोमड़ी पूंछ घास : इसके फलों या लम्बी डंडी पर चिपकने वाले बीजों से इसे पहचाना जा सकता है, जो कपड़ों पर आसानी से चिपक जाते हैं। बच्चे इन्हें जोड़ कर कई आकृतियां बनाते हैं। इसके पत्तों का काढ़ा पीना किडनी के रोगियों या पेशाब रुक-रुक कर आने की समस्या में लाभकारी है।

रजनी अरोड़ा

उत्पादकता वृद्धि में फसल चक्र का महत्व

कविता भादू, पीएच.डी. विधार्थी, राजमाता विजयाराजे सिंधिया, कृषि विश्वविद्यालय, ग्वालियर (एम.पी.); डॉ. रोकश चौधरी, सहायक प्रोफेसर, कृषि विवि., जोधपुर (राजस्थान)

अलग-अलग तरह की फसलों को किसी निश्चित क्षेत्र पर, एक निश्चित क्रम से किसी निश्चित समय में बोने को फसल चक्र कहते है। इसका उद्देश्य यह है कि इससे आपकी भूमि की जैविक, रासायनिक और भौतिक दशाओं में संतुलन आता है और आपकी फसलों की गुणवत्ता और पोषकता भरपूर मात्रा में मिलती है। इस विधि के अंतर्गत एक विशेष खेत में नियमित सांचे व श्रेणी के अंदर उगने वाली वार्षिक और द्विवार्षिक फसलों की जातियों और कुलों को आपस में बदल दिया जाता है। ऐसा करने से खरपतवार बीमारियां व कीटों चक्र टूट जाता है और मिट्टी की उर्वरा शक्ति बढ़ने लग जाती है। इसके अलावा मिट्टी में कार्बन तत्वों की मात्रा भी बढ़ जाती है और आपकी भूमि में बिना किसी रसायन के उपयोग से अच्छी से अच्छी फसल उग सकती हैं।

फसल चक्र क्या है :- किसी निश्चित क्षेत्र पर निश्चित अवधि के लिए भूमि की उर्वरता को बनाये रखने के उद्देश्य से फसलों को अदल-बदल कर उगाने की क्रिया को फसल चक्र या सस्य आवर्तन या सस्यचक्र या क्रॉप रोटेशन कहते है। अथवा किसी निश्चित क्षेत्र में एक नियत अवधि में फसलों को इस क्रम में उगाया जाना कि उर्वरा शक्ति का कम से कम ह्रस हो फसल चक्र कहलाता है।

फसल चक्र के उद्देश्य क्या है :- इसका उद्देश्य पौधों के भोज्य तत्वों का सदुपयोग तथा भूमि की भौतिक, रासायनिक तथा जैविक दशाओं में संतुलन स्थापित करना है। फसल चक्र का जैविक खेती में भूमि की उर्वरता एवं खाद्य पदार्थो की शुद्धता बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

फसल चक्र क्यों आवश्यक है :- किसी खेत में लगातार एक ही फसल उगाने के कारण कम उपज प्राप्त होती है तथा भूमि की उर्वरता खराब होती है। भारत के अनेक भागों में प्रचलित सबसे लोकप्रिय फसल उत्पादक प्रणाली धान, गेहूं, मृदा-उर्वरता के टिकाऊपन के खतरे का स्पष्ट आभास कराती प्रतीय हो रही है। इसके कारण उपजाऊ सूक्ष्म जीवों की कमी, मित्र जीवों की संख्या में कमी, हानिकारक कीट पतंगों का बढ़ावा, खरपतवार की समस्या में बढ़ोत्तरी, जलधारण क्षमता में कमी, भूमि के भौतिक, रासायनिक गुणों में परिवर्तन, क्षारीयता में बढ़ोत्तरी, भूमिगत जल का प्रदूषण, कीटनाशीयों का अधिक प्रयोग तथा नाशीजवों में उनके प्रति प्रतिरोधक क्षमता का विकास आदि हानियां होती है। आज न तो केवल उत्पाद वृद्धि रूक गई है, बल्कि एक निश्चित मात्रा में उत्पादन प्राप्त करने के लिए पहले की अपेक्षा न बहुत अधिक मात्रा में उर्वरकों का प्रयोग करना पड़ रहा है, क्योंकि भूमि में उर्वरक क्षमता उपयोग का ह्रास बढ़ गया है। इन सब विनाशकारी अनुभवों से बचने के लिए हमें फसल चक्र, फसल संघनता के सिद्धांतों को दृष्टिगत रखते हुए फसल चक्र में दलहनी फसलों से एक टिकाऊ फसल उत्पादन प्रक्रिया विकसित होती है।

फसल चक्र को प्रभावित करने वाले कारक

जलवायु संबंधी कारक :- जलवायु के मुख्य कारक तापक्रम, वर्षा, वायु एवं नमीं है। यही कारक जलवायु को प्रभावित करते है, जिससे फसल चक्र की प्रभावित होता है। जलवायु के आधार फसलों को तीन वर्गो में मुख्य रूप से बांटा गया है जैसे-खरीफ, रबी एवं जायद।

भूमि संबंधी कारक :- भूमि संबंधी कारकों में भूमि की किस्म, मृदा उर्वरता, मृदा प्रतिक्रिया, जल निकास, मृदा की भौतिक दशा आदि आते है। ये सभी कारक फसल की उपज पर गहरा प्रभाव डालते है।

सिंचाई के साधन :- सिंचाई जल की उपलब्धता के अनुसार ही फसल चक्र अपनाना चाहिए।

किसान की आर्थिक दशा :- किसानों की आर्थिक स्थिति का भी फसल चक्र पर प्रभाव पड़ता है। किसान के पास पूंजी एवं संसाधनों की उपलब्धता के अनुसार ही फसल चक्र अपनाना चाहिए।

बाजार की मांग :- बाजार की मांग के अनुरूर फसलें ली जानी चाहिए। जैसे-शहर के नजदीक वाली भूमिओं में साग-सब्जी वाली फसलों को प्राथमिकता देना चाहिए।

प्रक्षेत्र से बाजार की दूरी :- व्यापाकि दृष्टि से ली गई फसलों के लिए यह आवश्यक है कि बाजार प्रक्षेत्र के पास होना चाहिए।

आवागमन के साधन :- आवागमन के समुचित साधन उपलब्ध होने से फसल चक्र में सुविध के अनुसार फसलों का समावेश करना चाहिए।

श्रमिकों की उपलब्धता :- कृषि में श्रमिकों का मुख्य कार्य होता है। यदि श्रमिक आसानी से व पर्याप्त संख्या में उपलब्ध है तो संघन फसल चक्र अपनाया जा सकता है तथा फसल चक्र में नगदी फसलों को समावेशित लाभ लिया जा सकता है।

खेती का प्रकार :- यदि खेती का मुख्य अंग पशु पालन है तो ऐसी जगह चारे वाली फसलें ली जायें।

किसान की घरेलू आवश्यकताएं :- किसान को अपनी घरेलू आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर फसल चक्र अपनाना चाहिए।

सामाजिक रीति-रिवाज :- फसलों के चुनाव पर सामाजिक विचारों का भी प्रभाव पड़ता है जैसे-प्याज, लहसुन का सेवन न करने वाले किसान उन्हें उगाना नहीं चाहेंगे।

राजकीय नियंत्रण :- तम्बाकू, अफीम एवं भांग आदि की खेती पर आबकारी कर लगता है और अधिकांश लाभांश सरकार को देना पड़ता है। इस कारण इन फसलों को किसान अपने फसल चक्र मे नही लगाना चाहेंगे। इस प्रकार प्रत्येक राज्य में वहां की जलवायु एवं भूमि परिस्थिति के अनुसार अलग-अलग फसल चक्र अपनाये जा सकते है। फसल चक्र का जैविक खेती में भूमि की उर्वरता एवं खाद्य पदार्थो की शुद्धता बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

फसल चक्र के सिद्धांत :- फसल चक्र निर्धारण से पूर्व किसान को अपनी भूमि की किस्म, फसल किस्म, दैनिक अवश्यकताएं, लागत का स्वरूप तथा भूमि की उर्वरा शक्ति को बनाये रखने के उद्देश्य को ध्यान में रखना चाहिए। अत: फसल चक्र अपनाते समय निम्न सिद्धांतों का अनुसरण करना चाहिए।

* दलहनी फसलों के बाद खाद्यान्न फसलें बोयी जायें। दलहनी फसलों की जड़ों में ग्रंथियां पाई जाती है। जिनमें राईजोबियम जीवाणु पाये जाते है। ये वायुमंडलीय नाईट्रोजन का स्थिरीकरण करती है। उदाहरण के लिए चना मक्का, अरहर गेहूं, मेथी, कपास, मूंग, गेहूं, लोबिया, ज्वार आदि। इस हेतु रबी खरीफ या जायद में से किसी भी ऋतु में दलहनी फसल अवश्य लेना चाहिए।

* गहरी जड़ वाली फसल के बाद उथली जड़ वाली फसल लगानी चाहिए। इसके विपरीत ऐसा करने से मिट्टी का कटाव अधिक होता है। अत: ऐसी फसलों का हेरफेर होना चाहिए, जिससे मृदा कटाव एवं उर्वरता ह्रास को रोका जा सके। जैसे-सोयाबीन गेहूं।

* दो तीन वर्ष के फसल चक्र में खरीफ में हरी खाद वाली फसल ली जाये इस प्रकार के फसल चक्र से भूमि उर्वरा शक्ति बनी रहती है, जो कि भूमि ये वायुमंडलीय नाईट्रोजन का स्थिरीकरण करती है। हरी खाद के द्वारा भूमि में 40-50 कि.ग्रा. नाईट्रोजन प्रति हैक्टेयर स्थिर होती है। इसके लिए सनई, ढैचा, मूंग, उड़द आदि फसलों का उपयोग किया जा सकता है।

* फसल चक्र में साग-सब्जी

मिट्टी की विभिन्न परतों में पोषक तत्वों, पानी एवं लवणों का समुचित उपयोग हो जाता है। जैसे कपास-मेथी, अरहर, गेहूं, चना, धान आदि।

* अधिक पानी चाहने वाली फसल के बाद कम पानी चाहने वाली फसल, फसल चक्र में कम सिंचाई चाहने वाली फसल एवं अधिक सिंचाई चाहने वाली फसल को एक क्रम में उगाना चाहिए। जैसे गन्ना, जौ, धान, चना या मटर आदि।

* अधिक पोषक तत्व चाहने वाली फसल के बाद कम पोषक तत्व चाहने वाली फसलें उगायें। जैसे आलू, लोबिया, गन्ना, गेहूं, आलू, कद्दूवर्गीय।

* अधिक कर्षणा क्रियायें परिष्करण या निराई-गुड़ाई चाहने वाली फसल के बाद कम कर्षण क्रियायें चाहने वाली फसल उगाना, इस प्रकार के फसल चक्र से मृदा की संरचना ठीक बनी रहती है एवं लागत में भी कमी आती है। जैसे मक्का, चना, आलू, प्याज, गन्ना, मूंग।

* दो-तीन वर्ष के फसल चक्र में खेत को एक बार खाली या पड़ती छोड़ा जाये। फसल चक्र में खेत में पड़ती छोड़ने से भूमि का उर्वरता में हो रहे लगातार ह्रास से बचा जा सकता है तथा अधिक पोषक तत्व चाहने वाली फसल से पूर्व खेत को एक बार खाली अवश्य छोड़ना चाहिए। जैसे मक्का, गेहूं, मूंग, ज्वार, चना पड़ती गेहूं 3 वर्षीय फसल चक्र।

* दूर-दूर पंक्तियों में बोयी जाने वाली फसल के बाद घनी बोई जाने वाली फसल उगानी चाहिए। वर्षा के दिनों में संघन एवं भूमि को आच्छदित करने वाली फसल लगाने से मृदा क्षरण कम होता है। जबकि दूर-दूर पंक्तियों में बोई गई, फसल वाली फसल का समावेश होना चाहिए अत: इसके लिए खरीफ, रबी या जायद की फसलों में से एक फसल सब्जी वाली होनी चाहिए। जैसे, आलू, प्याज, बैंगन, टमाटर आदि।

* फसल चक्र में तिलहनी फसल का समावेश होना चाहिए। घर की आवश्यकता को ध्यान में रखने हुये ऐसा फसल चक्र तैयार करना चाहिए जिसमें एक फसल तेल वाली हो। जैसे-सरसों, मूंगफली, तिल आदि।

* एक ही प्रकार की बीमारियों से प्रभावित होने वाली फसलों को लगातार एक ही खेत में नहीं उगाना चाहिए, इससे फसलों का चक्र बढ़ जाता है। जिससे फसलों की हानि नहीं उठानी पड़ती हैं। अच्छे फसल चक्र अपनाने से फसलों को कई बीमारियों से बचाया जा सकता है। जैसे कि चना एवं अरहर में उक्टा रोग की सही रोकथाम किसी खेत में 1-2 वर्ष के अंतराल में लगाने से की जा सकती है।

* फसल चक्र ऐसा होना चाहिए कि वर्ष भर उपलब्ध संसाधनों का समुचित उपयोग होता रहे। फसल चक्र निर्धारण के समय यह ध्यान रखना चाहिए कि किसान के पास उपलब्ध संसाधनों जैसे भूमि, श्रम, पूंजी, सिंचाई इत्यादि का वर्ष भर सदुपयोग होता रहे एवं किसान की आवश्यकताओं की पूर्ति फसल चक्रग में समावेशित फसलों के द्वारा होती रहे।

फसल चक्र से लाभ

पोषक तत्वों का समान व्यय :- फसलों की जड़ें गहराई तथा फैलाव में विभिन्न प्रकार की होती है, अत: गहरी तथा उथली जड़ वाली फसलों के क्रमश: बोने से पोषक तत्वों का व्यय विभिन्न गहराईयों पर समान होता है, जैसे-गेहूं व कपास।

पोषक तत्वों का संतुलन :- विभिन्न पौधे नाईट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश तथा अन्य पोष तत्व विभिन्न-भिन्न मात्राओं में लेते हैं। सस्य चक्र द्वारा इनका पारस्परिक संतुलन बना रहता है।

हानिकारक कीट और रोग तथा खरपतवार की रोकथाम :- एक फसल अथवा उसी जाति की अन्य फसलें, लगातार बोने से उनके हानिकारक कीड़े, रोग तथा साथ उगने वाली खरपतवार उस खेत में बनी रहती है।

श्रम, आय तथा व्यय का संतुलन :- एक बार किसी फसल के लिए अच्छी तैयारी करने पर दूसरी फसल बिना विशेष तैयारी के ली जा सकती है और अधिक खाद चाहने वाली फसल को पर्याप्त मात्रा में खाद को देकर, शेष खाद पर अन्य फसलें लाभ के साथ ली जा सकती है, जैसे-आलू के पश्चात प्याज या कद्दूवर्गीय आदि।

भूमि में कार्बनिक पदार्थ की पूर्ति :- निराई-गुड़ाई चाहने वाली फसलें आलू, प्याज आदि बोने से भूमि मे जैव पदार्थो की कमी हो जाती है इनकी पूर्ति दलहन वर्ग की फसलों तथा हरी खाद के प्रयोग से हो जाती है।

भूमि में नाईट्रोजन की पूर्ति :- दलहन वर्ग की फसलों की जैसे सनई, ढैंचा, मूंग इत्यादि भूमि में तीन या चार वर्ष में एक बार जोत देने से न केवल कार्बनिक पदार्थ ही मिलते है। अपितु नाईट्रोजन भी मिलता है, क्योंकि इनकी जड़ की छोटी-छोटी गांठों में नाईट्रोजन स्थापित करने वाले जीवाणुं होते हैं।

खरपतवार की सफाई :- निराई-गुड़ाई चाहने वाली फसलों के बोने से खरपतवार का सफाया अपने आप हो जाता है।

कटाव से बचत :- उचित फसल चक्र से वर्षा के जल से भूमि का कटाव रूक जाता है तथा खाद्य पदार्थ बहने से बच जाते हैं।

समय का सदुपयोग :- इससे कृषि कार्य उत्तम ढंग से होता है। खेत एवं किसान व्यर्थ खाली नहीं रहते है।

भूमि के विषैले पदार्थो से बचाव :- फसलों जड़ों से कुछ विषैला पदार्थ भूमि में छोड़ती है। एक ही फसल बोने से भूमि में विषैले पदार्थ अधिक मात्रा में एकत्रित होने के कारण हानि पहुंचाते हैं।

अधिक उपज :- उपर्युक्त कारणों से फसल की उपज प्राय: अधिक हो जाती है।

उर्वरा शक्ति की रक्षा :- भूमि की उर्वरा शक्ति ठीक रखी जा सकती है।

निष्टकर्ष :- अंतत: इस निष्कर्ष पर पहुंचा जा सकता है कि फसल चक्र से मृदा उर्वरता बढ़ती है, भूमि में कार्बन-नाईट्रोजन के अनुपात में वृद्धि होती है। भूमि के पी.एच. तथा क्षारीपत में सुधार होता है। भूमि की संरचना में सुधार होता है। मृदा क्षरण की रोकथाम होती है। फसलों का बीमारियों से बचाव होता है, कीटों का नियंत्रण होता है, खरपतारों की रोथकाम होती है, वर्ष भर आय प्राप्त होती रहती है। भूमि में विषाक्त पदार्थ एकत्र नहीं होने पाते है। उर्वरक, अवशेषों का पूर्ण उपयोग हो जाता है। सीमित सिंचाई सुविधा का समुचित उपयोग हो जाता है। अत: संपोषित विकास के लक्ष्य प्राप्ति हेतु फसल चक्र आवश्यक है। ❑

बरसीम की वैज्ञानिक खेती एवं गुणवत्ता बीज उत्पादन तकनीक

आत्मन पूनिया, वर्षा एवं डी.एस. फोगाट,
चारा अनुभाग, आनुवंशिकी और पादप प्रजनन विभाग,
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

कृषि क्षेत्र गतिशील है। कृषि एक देश की अर्थव्यवस्था में बहुत योगदान देती है और विकासशील देशों में रोज़गार के द्वारा उच्चतम मानव संसाधन शामिल करती है। चारा फसलों में सुधार सीमित है और चारा उत्पादन और उत्पादकता में सबसे महत्वपूर्ण बाधा विभिन्न पारिस्थितिक-भौगोलिक क्षेत्रों के तहत किसानों को बेहतर गुणवत्ता वाले बीज की अनुपलब्धता है। खाद्य और चारा के लिए अनाज के उच्च उत्पादन और उत्पादकता की मांग की गंभीर रूप से बढ़ती आबादी के कारण चारा फसल क्षेत्र का विस्तार संभव नहीं है, जबकि वाणिज्यिक फसलों पर उच्च आर्थिक रिटर्न के लिए ध्यान दिया जा रहा है, इसलिए गुणवत्ता वाले बीज की उपलब्धता आवश्यक और सबसे महत्वपूर्ण है।

बरसीम (ट्राइफोलियम अलेक्जेंड्रिनम, $2n = 2x = 16$) हरे चारे के लिए विश्व स्तर पर उगाई जाने वाली रबी मौसम की सबसे महत्वपूर्ण फसल है। बरसीम की बहु-कट प्रकृति और उच्च पुनर्जनन क्षमता इस फसल को पूरे मौसम में उपलब्ध बेहतर गुणवत्ता वाले हरे चारे के उच्च उत्पादन के लिए उपयुक्त बनाती है। अनाज और अन्य फसलों की तुलना में इन फसलों का गुणवत्तापूर्ण बीज उत्पादन बहुत कठिन होता है, जिसके लिए उच्च प्रबंधन कौशल की आवश्यकता होती है।

बरसीम को चारे की फसलों का राजा माना जाता है, यह दुनिया का लोकप्रिय पशुधन चारा है, जो भारत के लगभग 2 मिलियन हैक्टेयर क्षेत्रों में नाइट्रोजन-निर्धारण, वार्षिक, पौष्टिक और बहु-कट चारा फसल के लिए जाना जाता है। फसल-चक्र में बरसीम को शामिल करने से मिट्टी की उर्वरता में वृद्धि, मिट्टी की गुणवत्ता, जल निस्पंदन, बाद की फसलों में कम रोग की घटना, खरपतवार की आबादी में कमी और कार्बन पृथक्करण सहित कई लाभ मिलते हैं। बरसीम की खेती के तहत भारत सबसे पहले स्थान पर है, उसके बाद मिस्र (1.1 मिलियन हैक्टेयर) और पाकिस्तान (0.71 मिलियन हैक्टेयर) है। उच्च गुणवत्ता प्रोटीन और लम्बे समय (नवम्बर-मई) के लिए हरे चारे की उपलब्धता ने इसे चारे की फसलों का राजा बना दिया है। बरसीम के चारे में 17-21 प्रतिशत प्रोटीन, 12-15 प्रतिशत शुष्क पदार्थ और 65-75 प्रतिशत पाचनशीलता होती है। यह औसतन 20 किलो नाइट्रोजन प्रति एकड़ मिट्टी में स्थिर करता है और मिट्टी उर्वरता बढ़ाता है। बरसीम की अधिक उपज प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित सस्य क्रियाओं को अपनाने की आवश्यकता है :

बरसीम की बेहतर किस्में

किस्म का नाम	कटाई की संख्या	चारा (क्विं./एकड़)	बीज (क्विं./एकड़)
मेस्कावी	5-6	240-270	1.4-1.6
हिसार बरसीम-1	5-6	270-290	1.6-1.8
हिसार बरसीम-2	6-7	300-325	1.3-1.4

भूमि की आवश्यकता : बरसीम बीज दोमट मिट्टी पर, अम्लता और लवणता से मुक्त, पी.एच. 7 से 8 पर बोया जाना चाहिए। मिट्टी में सिंचाई की अच्छी सुविधा होनी चाहिए और जल निकासी अच्छी होनी चाहिए।

खेत की तैयारी : खेत की 2-3 बार गहरी जुताई करें और सुहागा लगा कर समतल करें। उच्च उपज के लिए समतल खेत एक समान उपजाऊ भूमि, खरपतवार प्रजातियों और अन्य पौधों से मुक्त करना बहुत आवश्यक है।

बुवाई का समय : बरसीम को चारे के रूप में उपयोग करने के लिए इसे अक्तूबर महीने में उगाया जाना चाहिए ताकि हमें अधिक कटाई मिल सके। यदि इसे अक्तूबर के बाद उगाया जाता है, तो हमें चारे की कम उपज प्राप्त होगी।

बीज और बुवाई : बुवाई के लिए 8-10 किलो बीज की मात्रा का उपयोग करें। हमेशा सभी मानकों का विश्लेषण करके विश्वसनीय स्त्रोतों से बीज खरीदें, जो अंततः हमारे लिए बेहतर उपज की गारंटी देगा। पहली कटाई में अधिक उपज प्राप्त करने के लिए बरसीम के साथ आधा किलो गोभी सरसों उगाई जा सकती है, अन्यथा उच्च उपज सुनिश्चित करने के लिए 10 किलो जई बरसीम के साथ उगाई जा सकती है। बरसीम की बुवाई पानी से भरे खेत में बीजों को फैला कर की जाती है, लेकिन इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि इस दौरान हवा का प्रवाह ना हो।

बीज का उपचार और इसका सही तरीका : बरसीम को पहली बार उगाने के दौरान एक विशेष प्रकार के जैव उर्वरक की आवश्यकता होती है, जो इसके विकास के लिए बहुत उपयोगी है एवं अहम् भूमिका निभाता है। यह जैव उर्वरक क्षेत्र के कृषि विकास अधिकारी एवं सूक्ष्म जीव विज्ञान विभाग, चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय में उपलब्ध है। जैव उर्वरक का एक पैकेट 10 रुपए में उपलब्ध है, जो एक एकड़ बरसीम बीज के उपचार के लिए पर्याप्त है। 100 ग्राम गुड़ लेकर आधा लीटर पानी में घोल कर उसमें एक पैकेट बायोफर्टिलाइज़र डाल कर मिला लें। इसे 8-10 किलो बरसीम बीज के उपचार के लिए प्रयोग करें और इस बात का ध्यान रखें कि इसे सभी बीजों पर अच्छी तरह और समान रूप से लगाया जाए। उपचार के बाद इस उपचारित बीज को छाया में रख कर सुखा लें।

उर्वरक प्रबंधन : बरसीम की वृद्धि और विकास के लिए उर्वरक बहुत महत्वपूर्ण है। नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटाशियम पौधों के लिए आवश्यक प्राथमिक पोषक तत्व है। बुवाई से पहले एक एकड़ बरसीम 10 किलो नाइट्रोजन और 28-30 किलो फास्फोरस उर्वरक की आवश्यकता होती है (जिसकी आपूर्ति 22 किलो यूरिया और 175 किलो सिंगल सुपर फास्फेट से होती है)।

सिंचाई प्रबंधन : बरसीम में पहली सिंचाई महत्वपूर्ण है और अच्छी फसल के लिए इसे जल्दी उगाना चाहिए। पहली सिंचाई हल्की मिट्टी में 3-5 दिनों के भीतर और भारी मिट्टी में 6-8 दिनों में बुवाई के बाद की जा सकती है। उसके बाद इसे अक्तूबर-नवम्बर के दिनों में 10-12 दिनों के अंतरावधि, दिसम्बर से फरवरी के दौरान 15-20 दिनों के भीतर और मार्च से मई तक 10-12 दिनों के अंतरावधि में सिंचाई अवश्य करें। प्रत्येक कटाई के बाद सिंचाई अवश्य करें।

कटाई प्रबंधन : बरसीम में, चारे के लिए पहली कटाई बुवाई के लगभग 50 दिनों में तैयार हो जाती है और बाद में सर्दियों के दौरान 35-40 दिनों में और बसंत में 25-30 दिनों के अंतराल पर कटाई की जाती है, इस प्रकार कुल 6-7 कटाई होती है।

बरसीम के हानिकारक कीट और उनका प्रबंधन :

काली चींटी : काली चींटी अंकुरण से पहले ही बीज निकाल ले जाती है, इसलिए इनकी कॉलोनियों को ढूंढ कर, 2 प्रतिशत मिथाइल पैराथियान का छिड़काव करके इन्हें नियंत्रित किया जा सकता है।

सतही टिड्डा : अप्रैल माह में बरसीम की फसल पर इस कीट का प्रकोप तेज़ी से होता है। इस समय 90 प्रतिशत कीट अन्य फसल के खेतों से आते हैं और बरसीम पर हमला करते हैं। 400 मिलीलीटर मैलाथियान / सायथियोन / मेल्टाफ / मेलामार (50 ई.सी.) को 300 लीटर पानी में मिला कर एक एकड़ में छिड़काव करें।

यदि बरसीम को केवल बीज के लिए उगाया जाता है, तो इस कीट का नियंत्रण मिथाइल पैराथियान 2 प्रतिशत धूड़े (10 किलोग्राम प्रति एकड़) से करना चाहिए। यदि बरसीम को केवल चारे के लिए उगाया जाता है, तो इस कीट को मैलाथियान से नियंत्रित किया जाना चाहिए और हरा चारा जानवरों को खिलाने के लिए छिड़काव के 10 दिन बाद लेना चाहिए।

बरसीम के रोग और उनका नियंत्रण :

तना गलन रोग : फफूंद जो बीज या मिट्टी में रहती है, तने के निचले हिस्से पर हमला करती है, जिसके परिणामस्वरूप तना सड़ जाता है। यह सफेद कपास की तरह माइसेलियम बनाता है, जो भूमि पर उपलब्ध सड़े हुए पदार्थों पर बढ़ता है।

बुवाई से पहले रोग मुक्त खेत का चयन कर इस रोग को नियंत्रित किया जा सकता है। जहां इसका प्रकोप अधिक हो, वहां 2-3 साल का फसल-चक्र अपनाएं और हरियाणा बरसीम-1 और हरियाणा बरसीम-2 जैसी प्रतिरोधी किस्मों को भी अपनाएं। जहां भी यह रोग दिखाई दे, संक्रमित पौधों को काट लें या हटा दें, ताकि यह सूर्य के प्रकाश के सम्पर्क में आ सके। 0.1 प्रतिशत बाविस्टिन (1 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से) घोल का प्रयोग करें और सिंचाई करें।

बरसीम के गुणवत्ता बीज उत्पादन की तकनीक : बरसीम बहु-कट फसल के रूप में उगाई जाती है, पहले हरे चारे को काटा जाता है और बाद में बीज उत्पादन के लिए प्रबंधित किया जाता है। फूल, बीज भरने और परिपक्वता के दौरान प्रतिकूल मौसम की स्थिति के कारण अनिश्चित और कम बीज सेटिंग के कारण किसान चारा बीज उत्पादन में अधिक रुचि नहीं लेते हैं। चारा फसलें शर्मीली सीडर हैं और जानवरों को खिलाने के लिए बीज सेटिंग से पहले काटी जाती हैं। बरसीम 3-4 कटों के बाद बीज पैदा करता है, लेकिन बीज विकास के लिए लगभग दो महीने की आवश्यकता होती है और प्रत्येक कटाई के बाद सिंचाई और उर्वरक का उपयोग बेहतर पुनर्जनन के लिए फायदेमंद और महत्वपूर्ण होता है।

एक ही फसल किस्म के बीज को उसी भूमि के टुकड़े पर नहीं उगाया जाना चाहिए, जिस पर पिछले वर्ष एक ही किस्म की फसल उगाई गई थी, जब तक कि एक ही किस्म के बीज प्रमाणीकरण मानकों की पुष्टि ना हो। बीज के बनने और पकने के दौरान अक्सर फसल की सिंचाई की जाती है। प्रत्येक कटाई के बाद सिंचाई महत्वपूर्ण है। बीज उत्पादन कार्यक्रम में सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि बीज की गुणवत्ता को मुख्य रूप से विशेष चरणों में रौगिंग और क्षेत्र निरीक्षण द्वारा बनाए रखा जा सकता है। रूजिंग का अभ्यास बंद प्रकार और अन्य अवांछित पौधों को हटाने के लिए किया जाता है, जबकि क्षेत्र निरीक्षण निर्धारित बीज और क्षेत्र मानकों को सुनिश्चित करता है।

बरसीम की फसल दिसंबर के पहले पखवाड़े में दो कटाई के बाद बीज उत्पादन के लिए बोई जाती है, लेकिन चारे के उद्देश्य से इसे अक्तूबर-नवम्बर में बोया जा सकता है और फरवरी तक कटाई की जाती है और फिर बीज उत्पादन के लिए छोड़ दिया जाता है। बीज उत्पादन के लिए बरसीम फसल को नवम्बर या जनवरी के अंत में भी बोया जा सकता है, जिससे फसल को बीज उत्पादन के लिए छोड़ने से पहले हरे चारे की दो से तीन कटिंग प्रदान की जा सकती है। जल्दी या देर से बुवाई करने से खराब बीज उत्पादन होता है।

बरसीम एक एंटोमोफिलस क्रॉस-परागण वाली फसल है और इसमें कीड़े, विशेष रूप से मधुमक्खियां, अच्छी बीज सेटिंग में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। उच्च बीज उपज प्राप्त करने के लिए प्रति हैक्टेयर 3-8 मधुमक्खी कालोनियों को बीज भूखंड के पास रखा जाना चाहिए। मधुमक्खियां अच्छे परागण एजेंट के रूप में काम करती हैं। बीज के परिपक्व होने के तुरन्त बाद फसल की कटाई की जा सकती है, अन्यथा कटाई में देरी होने पर बीज की गुणवत्ता खेत में ही खराब होने लगती है। जब कटाई यंत्रवत् की जानी हो, तो बीज फसल की नमी के अनुसार मशीन को पूरी तरह से साफ किया जाना चाहिए और उसके सभी आंतरिक संचालन के लिए ठीक से कैलिब्रेट किया जाना चाहिए। कटाई और थ्रैशिंग ऑपरेशन के दौरान यांत्रिक क्षति और बीज को मिश्रण के खिलाफ पर्याप्त सावधानी बरतनी चाहिए। बीज की फसल मई के अंतिम सप्ताह या जून की शुरूआत में पक जाती है। फसल को लाठी से पीट कर या बैलों से रौद कर काटा जाता है। बरसीम औसतन 4.5 से 5.5 क्विंटल प्रति हैक्टेयर उपज देता है। उत्पादित बीज प्रकार के लिए सही, व्यवहार्य और सस्ता है, जो फसल से अधिकतम लाभ प्राप्त करने में मदद करता है और किसान की आर्थिक स्थिति में सुधार करता है।

आमतौर पर उत्पादित बीज, कटाई और थ्रैशिंग के बाद, प्रसंस्करण संयंत्रों में ले जाने से पहले नमी की मात्रा को कम करने के लिए धूप में सुखाया जाता है। बीज के सीधे सूर्य के प्रकाश के सम्पर्क में आने से बीज की गुणवत्ता प्रभावित हो सकती है। इसलिए बीज को विसरित धूप की स्थिति में शेड के नीचे सुखाया जा सकता है। सुखाने का काम शुरू करने से पहले गंदगी, भूसी, मिट्टी के कणों आदि को हटाने के लिए बीज स्टॉक को पहले से साफ करने की सलाह दी जाती है। ग्रेडर के विभिन्न मॉडल का उपयोग करके बीज प्रसंस्करण निर्धारित छलनी के आकार या गुरुत्वाकर्षण विभाजक के माध्यम से किया जाना चाहिए। बीज का उपचार कवकनाशक की निर्धारित खुराक से किया जाना चाहिए और रोग पैदा करने वाले रोगजनकों और कीड़ों को बीज के साथ या उनके नए प्रवेश को नियंत्रित करने के लिए कीटनाशक का प्रयोग किया जाना चाहिए।

भविष्य की संभावना : बरसीम में बीज उत्पादन के लिए गुणवत्तापूर्ण बीज की आवश्यकता को पूरा करने के लिए बहुत ध्यान देने की आवश्यकता होती है। अधिक उपज देने वाली किस्मों को विकसित किया जाना चाहिए, क्योंकि चारा फसलों के तहत फसल क्षेत्र में वृद्धि संभव नहीं है। अनुसंधान कार्य को सुदृढ़ करने के लिए सरकार द्वारा अधिक धनराशि जारी की जानी चाहिए और बीज उत्पादन के लिए सार्वजनिक और निजी संस्थानों के बीच सामंजस्य बनाए रखा जाना चाहिए। बीज ग्राम की अवधारणा को अपनाने की आवश्यकता है और उत्पादकता व उत्पादन को बढ़ाने के लिए इसका गतिशील रूप से उपयोग किया जाना चाहिए। गुणवत्ता परीक्षण और बहुआयामी दृष्टिकोणों को बीज उत्पादक खिलाड़ियों द्वारा कदाचार की जांच करने की आवश्यकता है, किसानों के बीच विश्वास बनाया जाना चाहिए ताकि उन्हें पशुधन और अंततः कृषि स्थिरता के लिए अपने स्वयं के बीज का उत्पादन करने के लिए प्रोत्साहित किया जा सके। ❑

पराली प्रबंधन से बढ़ायी खेतों की उर्वरता

ऑस्ट्रेलिया में पढ़ने वाला बेटा भी बंटा रहा किसान का हाथ

करनाल ज़िले के रंबा गांव निवासी रघुविंदर सिंह और उनका बेटा समर्थ सिंह पिछले 5 साल से पराली प्रबंधन कर रहे हैं। उनका कहना है कि इसका सीधा प्रभाव उनकी फसल पर पड़ा है और आज वह 10 से 12 प्रतिशत अतिरिक्त फसल उत्पादन ले रहे हैं। इसके साथ-साथ फसल में डाले जाने वाले यूरिया की खपत को भी कम कर रहे हैं, क्योंकि भूमि की उर्वरत क्षमता में पराली प्रबंधन से काफ़ी लाभ मिल रहा है। किसान का बेटा समर्थ सिंह आस्ट्रेलिया में पढ़ता है, लेकिन हर वर्ष फसल कटाई और बुवाई के वक्त गांव लौट कर पिता का खेती में हाथ बढ़ाता है।

समर्थ सिंह ने बताया कि पराली प्रबंधन के लिए दूसरे किसानों को भी आगे आना चाहिए। समर्थ ने बताया कि वे करीब 60 एकड़ ज़मीन की खेती करते हैं। इस ज़मीन में से कुछ एकड़ पर वे पराली की कटर से कटाई करके ज़मीन के अंदर ही (ईन सी टू मैनेजमेंट) मिला देते हैं, जबकि कुछ में बेलर के माध्यम (एक्स सी टू मैनेजमेंट) से गांठें बनवाते हैं। दोनों ही स्थिति किसान के लिए फायदेमंद है।

समर्थ सिंह का कहना है कि आग लगाने से सबसे ज्यादा विकट समस्या पर्यावरण प्रदूषण की पैदा होती है। यह सीधे हमारे स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डालता है। पराली में आग लगाने से ज़मीन की उर्वरक क्षमता भी घटती है। ज़मीन के मित्र कीट भी पराली के साथ जल जाते हैं।

किसानों के हित में जारी

बीजोपचार

अच्छी फसलों का मूल आधार

बीजोपचार के लाभ

★ अधिक अंकुरण

★ अधिक प्रबल पौधे

★ आरंभिक बिमारियों का प्रभावी नियंत्रण

★ स्वस्थ पौधों की संख्या ज्यादा

देश के सभी किसान, पढ़ें होकर होशियार
अच्छी पैदावार तभी होगी, जब बीजों का हो सही उपचार

घीया, करेला, काली तोरी, राम तोरी और टमाटर के सफल उत्पादन में बांस विधि सहायक

थ्री टियर प्रणाली में बांसों से टमाटर का बढ़ाएं उत्पादन

सब्ज़ियों का उत्पादन समतल भूमि पर एक व्यापक क्षेत्र में किया जाता है। बरसात के मौसम में सिंचाई करने के तुरंत बाद हुई बारिश से 40 से 50 प्रतिशत फसल ज्यादा पानी होने के कारण डूबकर खराब हो जाती है। इसका मुख्य कारण गीली भूमि व हवा से पैदा होने वाली फफूंद होती है, जो पेड़-पौधों को और फलों को नुकसान पहुंचाती है। ऐसे में घीया, करेला, काली तोरी, राम तोरी, टमाटर आदि सब्ज़ियों को बचाने के लिए थ्री टियर प्रणाली बांस विधि सहायक है। हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार के सब्ज़ी विज्ञान विभाग के पूर्व अध्यक्ष डॉ. सुरेश कुमार अरोड़ा ने बताया कि सब्ज़ियों की फसल को बचाने के लिए बांसों का प्रयोग कर समस्या का पूर्ण समाधान किया जा सकता है।

उदाहरण के तौर पर टमाटर की परी, एन.एस.-5013, अर्का रक्षक, अर्का सम्राट, एन.एस.-524, हिम सोन, हिम शिखर, लक्ष्य रॉकी, मोल्या, रानी, एन.एस.-5527 और अभिलाष आदि ऐसी संकर प्रजातियां हैं, जिन्हें सितम्बर, अक्तूबर महीने में रोप कर खुले खेतों के अंदर बांसों का प्रयोग करते हुए, खरपतवार से बचने के लिए प्लास्टिक की पन्नी का प्रयोग करते हुए पौधों को सहारा देकर बांस के ऊपर चढ़ाया जाता है।

पानी जमा न होने दें

रोपाई करने के लगभग 25 दिन के पश्चात् टमाटर की बेलें बांसों के ऊपर चढ़ने के लिए तैयार हो जाती है। प्रत्येक बांस पर थ्री टियर प्रणाली से टमाटर के पौधे की शाखाओं को नायलॉन की डोरियों के ऊपर चढ़ा देना चाहिए, जिससे बेलों पर फूल और फल लगने के समय ज़रुरत से ज्यादा बारिश की वजह से इकट्ठे हुए पानी से कोई नुकसान नहीं होता। यदि नालियों या खालियों में पानी ज्यादा मात्रा में इकट्ठा हो जाए, उसे तुरन्त मोटर लगा कर खेत से निकाल देना चाहिए।

परागकण में मिलती है सहायता

पौधों को बांसों पर चढ़ाने से फूल व फल सामान्य रूप से लगाई गई टमाटर के पौधों की अपेक्षा बहुत ज्यादा संख्या में आते हैं और धीमी गति की हवा चलने से ये सभी फूल पर परागण की क्रिया करते हुए फल में तब्दील हो जाते है, जिससे उत्पादन बढ़ता है और एक पौधे से लगभग 5 से 7 किलो टमाटर आसानी से प्राप्त किया जा सकता है।

अन्य सब्ज़ियों में भी बांस विधि कारगर

इसी प्रकार बांसों का प्रयोग यदि गोल या लंबी घिया, करेला, काली तोरी और राम तोरी में किया जाए, तो प्रत्येक पौधे से इन सब्ज़ियों में भी बहुत ज्यादा अच्छी गुणवत्ता के फल अधिक मात्रा में प्राप्त हो सकते है। घीया, तोरी और करेला के लिए भूमि से 7 फीट की ऊंचाई पर रस्सी से जाल बना कर इन बेलों से फल उत्पादन की क्षमता को बढ़ा सकते हैं।

ज़रुरी बात

इस प्रणाली से सब्ज़ी पैदा करने के लिए बहुत ही आवश्यक है कि प्रत्येक किसान टपका सिंचाई या बूंद-बूंद सिंचाई की विधि को अपनाएं।